गुह्येश्वर महादेव (२/८४) उज्जैन



स्थान: शिप्रा किनारे रामघाट पर पिशाचमुक्तेश्वर महादेव तथा धर्मराजजी मंदिर के पास

पूजन का विशेष समय: अष्टमी, चतुर्दशी

विशेष फल: दर्शन मात्र से सिद्धिलाभ, धर्म तथा तप की रक्षा, पितरों को ब्रह्मलोक की प्राप्ति, अपना तथा इक्कीस पूर्व पीढ़ी का उद्धार, सभी पापों से मुक्ति, परमपद की प्राप्ति,

उज्जैन में भुक्ति-मुक्ति प्रदान करने वाले 84 सिद्धलिंग हैं जो सर्वपापहारी हैं जिनको चौरासी महादेव कहते हैं।
इन सब लिङ्गों में द्वितीय हैं पापनाशक गुह्येश्वर महादेव "गुहेश्वरं लिंगं द्वितीयं पापनाशनम्" जिनके दर्शन मात्र से सिद्धिलाभ होता है "यस्य दर्शनमात्रेण जायते सिद्धिरुत्तमा"

गुह्येश्वर महादेव कथा

स्कन्दपुराण अवन्तीखण्ड अवन्तीस्थचतुरशीतिलिङ्गमाहात्म्य अध्याय ०२

पुरा राथंतरे कल्पे देवदारुवने शुभे । ऋषिर्मंकणकोनाम वेदवेदांगपारगः । योगाभ्यासरतो नित्यं शांतिदांतिसमास्थितिः ।।
सिद्धिकामस्तपस्तेपे कथं सिद्धो भवाम्यहम् । रक्तमयविकारोयं कथं यास्यति संक्षयम् ।।
इति संचिंत्य हृदये प्रारब्धं तप उत्तमम् । बह्न्यब्दसहस्राणि तस्यातीतानि पार्वति ।।
कस्मिंश्चिदथ काले तु विद्धस्य पर्वतात्मजे । कराच्छाकरसो जातः कुशाग्रेण तदैव हि ।।
स च दृष्ट्वा तदाश्चर्यं विस्मयं परमं गतः । मेने सिद्धिं परां प्राप्तां सगर्वो वाक्यमब्रवीत् ।।
अहो तपःप्रभावोऽयं प्राप्ता सिद्धिर्मयाद्य वै । मत्तुल्यो नास्ति वै विप्रो येन सिद्धिः समागता ।।
शरीरं कुत्सितं चेदं मलमूत्रेण संयुतम् । मन्त्रस्नायुवसापृक्तमांसशोणितपूरितम् । हर्षेण महता युक्तः स ननर्त्त द्विजस्तथा ।।

पूर्व रथन्तर कल्प में शुभ देवदारुवन में मन्थनक नामक ऋषि ने यह विचार किया कि "मैं कैसे सिद्धि लाभ करूँगा? किस प्रकार मेरा यह रक्तमय विकार पूर्ण शरीर कैसे क्षयीभूत होगा? अर्थात कैसे देहबंधन छूटेगा? तदन्तर वे सिद्ध कामना से तप करने लगे। वे सदा योगाभ्यासी, शांति-दांत तथा सिद्ध कामी रहते थे। उन्होंने पूर्वोक्त विचार करके तप आरंभ किया। हे पार्वती! इस प्रकार तप करते उनको अनेक वर्ष व्यतीत हो गए। तब एक बार कुशाग्र से उनकी हथेली विद्ध हो गई, इससे

उनकी हथेली से शाकरस उत्पन्न होने लगा। यह देखकर अत्यंत चिंतित होकर सोचने लगे। तदन्तर उन्होंने गर्व पूर्ण वाक्य कहा कि- मैंने परमसिद्धि लाभ कर लिया। मेरे समान सिद्धियुक्त व्यक्ति जगत में नहीं है। यह शरीर कुत्सित-मल-मूत्र-वीर्य-मज्जा-स्नायु-वसा-संपृक्त है। यह मांस तथा रक्त से परिपूर्ण है। इस प्रकार विचार करते वे द्विज हर्षातिरेक के कारण नाचने लगे।

एतस्मिन्नृत्यति विप्रे जगत्स्थावर जंगमम् । अनृत्यद्रागसंयुक्तं प्रभावात्तस्य वै मुनेः ।।
न स्वाध्यायो वषट्कारः कर्मकांडो न च क्वचित् ।।
एतस्मिन्नंतरे देवा ब्रह्मविष्णु पुरःसराः । मामूचुर्विस्मिताः सर्वे नाथ नृत्यं तदा कुरु ।।
ऋषौ मंकणके देव नृत्यति नृत्यति सर्वतः । सदेवासुरमानुष्यं सर्वं लोकत्रयं विभो ।।
चलिताः पर्वताः स्थानात्क्षुभिता मेघपंक्तयः । शिखराणि विशीर्यंते धरणी पीडिता भृशम् ।।
स्रोतोमात्रा महानद्यो ग्रहा उन्मार्गतः स्थिताः ।।
त्रैलोक्यं व्याकुलीभूतं यावन्नायाति संक्षयम् । तावन्निवारयस्वैनं नान्यः शक्तो विना त्वया ।।

उस ऋषि के नृत्य करने के कारण सचराचर जगत उनके प्रभाव से रागयुक्त होकर नृत्य करने लगा। तब स्वाध्याय, वषट्कार, कर्मकाण्ड कहीं भी नहीं रह गया। उससे ब्रह्मा-विष्णु आदि देवता ने विस्मित होकर मुझसे कहा - हे नाथ! इस नृत्य को रोकिये। ऋषि मङ्कणक के नृत्य करने के कारण सचराचर जगत नृत्यरत हो गया है। सभी पर्वत अपने स्थान से च्युत हो रहे हैं। मेघश्रेणी क्षुभित हो रही है। अचल शिखर विलीन होते जा रहे हैं। यह धरती भी पीड़ित हो रही है। महानदियों का समस्त जल उछल रहा है। ग्रहगण अपना मार्ग छोड़कर उन्मार्गगामी हो रहे हैं। इस प्रकार त्रैलोक्य व्याकुल हो रहा है। अब आप ऐसा कुछ करिये, जिससे प्रलय न हो। आप उनको नृत्य करने से रोकिये। आपके अतिरिक्त ऐसा कोई भी नहीं है, जो उनको नृत्य से विरत कर सके।

तेषां तद्वचनं श्रुत्वा त्रिदशानां यशस्विनि । प्रतिज्ञातं मयात्यर्थं गत्वा तस्य समीपतः ।।
द्विजरूपं समास्थाय मया पृष्टो द्विजोत्तमः । किमर्थं नृत्यसि ब्रह्मन्कस्मात्ते हर्ष आगतः ।।
विरुद्धमृषिधर्माणां कामरागेण नर्त्तनम् । गीतं च नर्त्तनं चैव युवतीजनवल्लभम् ।।
ब्राह्मणस्य तपो भ्रंशः सदाचारस्य सत्तम । इति मत्वा द्विजश्रेष्ठ किमर्थं नृत्यसे भृशम्।।

हे यशस्विनी! उन देवगण का वचन सुनकर मैं तब प्रतिज्ञा करके उस ब्राह्मण के यहां गया। मैंने उससे पूछा - हे विप्र! आप क्यों नृत्य कर रहे हैं? आपके इस हर्ष का कारण क्या है? यह कामराग जनित नर्तन करना ऋषिधर्म के विरुद्ध है। गीत-नृत्य-युवतीगण का वल्लभ होना ब्राह्मण के तप तथा सदाचार का विरोधी होता है। हे द्विजप्रवर! यह जानकर भी सुनकर भी आप क्यों नृत्य कर रहे हैं?

ऋषिरुवाच ।।
किं न पश्यसि भो ब्रह्मन्कराच्छाकरसं च्युतम् । अतएव हि मे नृत्यं सिद्धोऽहं नात्र संशयः ।।

ऋषि कहते हैं - क्या आपको दिखलाई नहीं दे रहा है कि मेरी हथेली से शाकरस गिर रहा है, तभी मैं नृत्य कर रहा हूँ।

तस्य तदवचनं श्रुत्वा हासोऽतीव मया कृतः । अंगुष्ठस्ताडितः स्वीयोंगुल्यग्रेण च पार्वति ।।
ततो विनिर्गतं भस्म तत्क्षणाद्धिमपांडुरम् । हासेनोक्तो विशालाक्षि सगर्वो ब्राह्मणो मया ।।
पश्य मेंऽगुष्ठतो ब्रह्मन्भूरि भस्म विनिर्गतम् । न नृत्येहं न मे हर्षस्तथापि मुनिस्सम ।।
तद्दृष्ट्वा महदाश्चर्यं लज्जितो द्विजसत्तमः । धैर्यं च तादृशं दृष्ट्वा विस्मयं परमं गतः ।।

हे विशालाक्षी पार्वती! मैं तब ब्राह्मण का वाक्य सुनकर हँसा तथा अपनी ऊँगली के अग्रभाग से अपने अंगूठे को ताड़ित किया। तत्क्षण मेरे अंगूठे से भस्म निकलने लगा। तब मैंने गर्वपूर्वक हंसते-हंसते ब्राह्मण से कहा - हे ब्रहमन! अंगूठे से प्रचुर भस्म निकल रही है, किन्तु मैं तुम्हारी तरह हर्षित होकर नृत्य नहीं कर रहा हूँ। यह देखकर वह द्विजसत्तम अत्यन्त लज्जित हो गया तथा मेरा उस प्रकार का धैर्य देखकर वह अत्यन्त विस्मित भी हो गया।

अब्रवीत्प्रांजलिर्भूत्वा विस्मितेनांतरात्मना । नान्यं देवमहं मन्ये त्वां मुक्त्वा वृषभध्वजम् ।।
नान्यस्य विद्यते शक्ति रीदृशी भुवनत्रये । तस्मात्क्षमस्व देवेश मयाज्ञानादनुष्ठितम् ।।
तपःक्षयकरं कर्म विरुद्धं नर्त्तनं सताम्। बहुकालार्जितं पुण्यं तपसा दुष्क रेण तु । तद्गतं सहसा देव मदीयं नर्त्तनेन सु ।।
तस्य तदवचनं श्रुत्वा मयोक्तो द्विजसत्तमः । वरं वरय भद्रं ते तुष्टोऽहं द्विजसत्तम ।।
ज्ञानेनानेन विप्रेंद्र कं ते कामं करोम्यहम् ।।

तदन्तर वह ब्राह्मण मङ्कण हाथ जोड़कर कहने लगा - मैं आज से आपके अतिरिक्त अन्य देवता को नहीं मानूंगा। त्रिभुवन में अन्य देवता आप की तरह शक्तिमान नहीं हैं। हे देवेश! आप मुझे क्षमा करिये। मैंने अज्ञानता के कारण तपःक्षयकारी असज्ज्नों जैसा नर्तन किया था। मैंने दीर्घकाल कठोर तप द्वारा जो पुण्यार्जन किया था, इस नर्तन से वह नष्ट हो गया। उसका वाक्य सुनकर मैंने कहा - हे द्विजसत्तम! मैं तुम्हारा ऐसा ज्ञान देखकर प्रसन्न हो गया। वर मांगो। हे विप्रेन्द्र! मैं तुम्हारा क्या कार्य करूं वह कहो।

ऋषिरुवाच ।।
यदि देव प्रसन्नस्त्वं शरणागतवत्सल । यथा न स्यात्तपोहानिस्तथा नीतिर्विधीयताम्।।
मया प्रोक्तं प्रसन्नेन तस्य विप्रस्य पार्वति । तपस्ते वर्द्धतां विप्र महाकालवनं व्रज।।
तत्रास्ते सर्वदा पुण्या सप्तकल्पोद्भवा गुहा। पिशाचेश्वरदेवस्य उत्तरेण व्यवस्थिता ।।
तत्र द्रक्ष्यसि यल्लिंगं सप्तकल्पोद्भवं शुभम्। तस्य दर्शनमात्रेण तपस्ते वृद्धिमेष्यति ।।
काम क्रोधोद्भवं पापं लोभमोहसमन्वितम् । ईर्ष्यामत्सरजं चैव नाशं याति च किल्बिषम् ।।

ब्राह्मण ऋषि कहते हैं - हे शरणागत वत्सल! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तब आप ऐसा करें जिससे मेरे तप की हानि न हो। हे पार्वती! तब मैंने उसे कहा - हे विप्र! तुम्हारी तपस्या में वृद्धि होगी। तुम महाकालवन जाओ। वहां सप्तकलपोद्भवा एक गुफा है। यह पिशाचेश्वर से उत्तर दिशा में है। यहां तुम एक लिङ्ग देखोगे। उसके दर्शन मात्र से ही तुम्हारी तपस्या में वृद्धि होगी। तुम्हारा काम-क्रोध-लाभ-मोह-ईर्ष्या-मात्सर्यजनित जो कुछ भी दोष है, वह सब पाप नष्ट हो जायेगा।

मदीयं वचनं श्रुत्वा स विप्रो वेदपारगः । श्रुत्वा च नियमं देवि मदुक्तं स ततो द्विजः ।।
निःसृतो नियतो भूत्वा नमस्कृत्य पुनःपुनः । आजगाम गुहा यत्र महाकालवनोत्तमे ।।
ददर्श तत्र तल्लिंगं तपसो वर्द्धनं परम् । द्वादशादित्यसंकाशो जातो वै लिंगदर्शनात् ।।
एतस्मिन्नंतरे देवि देवैरुक्तं नभस्तले । गोप्यं लिंगं गुहोत्थं तु दृष्टं मंकणकेन तु ।।
सिद्धिः प्राप्ता द्विजेनैव दर्शनेन सुदुर्लभा । तस्माद्गुहेश्वरो देवि भविष्यति महीतले ।।

हे देवी! मेरे कथन तथा मेरे द्वारा वर्णित नियम को सुनकर वह द्विज मुझे पुनः-पुनः नमस्कार करके उस महाकाल वन में गया, जहां वह गुफा अवस्थित है। वहां पर उस ब्राह्मण ने उस लिङ्ग का दर्शन किया। दर्शन करते ही वह ब्राह्मण बारह आदित्य के समान हो गया। उस समय आकाश से देवता कहने लगे - इस गुफा के गुप्त लिङ्ग का दर्शन मङ्कण को प्राप्त हो गया इसके फल उसको दुर्लभ सिद्धि प्राप्त होगी और आज से यह लिङ्ग पृथ्वी पर गुहेश्वर नाम से प्रसिद्द होगा।

भक्त्या परमयोपेता ये द्रक्ष्यंति गुहेश्वरम् । न तेषां जायते विघ्नो धर्मस्य तपसस्तथा ।।
अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां दर्शनं यः करिष्यति । ब्रह्मलोकं गमिष्यंति पितरस्तस्य देहिनः ।।
अत्रागत्य प्रयत्नेन दर्शनं यः करिष्यति । उद्धरिष्यति चात्मानं पुरुषानेकविंशतिम् ।।
कृत्वा पापसहस्राणि दर्शनं यः करिष्यति । स याति परमं स्थानं यत्र देवो महेश्वरः ।।
ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वंगनागमः । दर्शनात्तस्यलिंगस्य सर्वं यास्यति संक्षयम् ।।

जो मानव भक्ति-भाव से गुहेश्वर का दर्शन करेगा, उसके धर्म तथा तप में कभी व्याघात नहीं होगा। जो मानव अष्टमी किंवा चतुर्दशी तिथि पर इस लिङ्ग का दर्शन करेगा, उसके पितरों को ब्रह्मलोक की प्राप्ति होगी। यहां आकर जो परम यत्नपूर्वक लिङ्ग दर्शन करेगा वह अपना तथा इक्कीस पूर्व पीढ़ी का भी उद्धारक होगा। जो मानव एक हजार पाप करके भी इस लिङ्ग का दर्शन करेगा, वह महेश्वर द्वारा अधिष्ठित परम स्थान का लाभ करेगा। ब्रह्महत्या-सुरापान-चोरी-गुरुपत्नीगमन प्रभृति पाप इस लिङ्ग के दर्शन मात्र से क्षयीभूत हो जाते हैं।

यत्किंचिदशुभं कर्म जन्मकोटिशतार्जितम् । क्षयं यास्यति तत्सर्वं स्पर्शमात्रेण नान्यथा ।।
महापातकयुक्ता हि देहिनो ये महीतले । तेऽपि लिंगं समासाद्य मुच्यंते सर्वपातकैः ।।
इत्युक्त्वा स द्विजो देवि दिव्यो मंकणको मुनिः । कृत्वाश्रमपदं पुण्यं तत्रैव तपसि स्थितः ।।
एष वै कथितो देवि प्रभावः पापनाशनः । श्रवणात्कीर्त्तनाद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।

करोड़ों जन्म के अर्जित अशुभकर्म इस लिङ्ग के स्पर्श मात्र से क्षय हो जायेंगे, यह अन्यथा वचन नहीं है। इस पृथ्वी पर जो मनुष्य महापाताकयुक्त हैं, वे इस लिङ्ग के समीप आने से ही सभी पापों से मुक्तिलाभ करेंगे। यह कहकर मङ्कण ब्राह्मण ने वहां आश्रम बनाया तथा वहीँ तप करने लगा। हे देवी! मैंने यह गुहेश्वर लिङ्ग का पापनाशन प्रभाव कहा। सुनने तथा इसका कीर्तन करने से सभी पापों का नाश हो जाता है।

स्रोत: मूल - sa.wikisource.org, हिन्दी अनुवाद - एस एन खण्डेलवाल चौखम्बा संस्कृत सीरीज